डी. पी. मुखर्जी (धुर्जटी प्रसाद मुखर्जी)

धुर्जटी प्रसाद मुखर्जी (डी. पी. मुखर्जी)

आपकी ख्याति एक मार्क्सवादी विचारक के रूप में रही है।

मार्क्सवाद को विश्लेषण की प्रणाली के रूप में स्वीकार किया है न कि एक राजनीतिक आदर्शवाद के रूप में ।

आपकी पुस्तक " इंट्रोडक्शन टू दी इंडियन म्यूजिक" एक समाजशास्त्रीय वर्णन है जिसकी तुलना मैक्स वेबर की "सोशल एंड नेशनल फाउंडेशन ऑफ म्यूजिक" से की जा सकती है।

डी. पी. मुखर्जी समाजशास्त्र में अन्य विषयों की भांति जमीन भी हैं, और छत भी।

डी. पी. मुखर्जी ने कहा है कि भारतीय समाजशास्त्र के दो उपागमो से विश्लेषण का प्रयास करना होगा-

1- तुलनात्मक उपागम,

2- प्रतीकों व मूल्यों का परीक्षण।

डी .पी. मुखर्जी हमारी मनुष्य की अवधारणा पुरुष की है, व्यक्ति कि नहीं।

डी .पी .मुखर्जी के अनुसार परंपरा का मूल शब्द वाहक है जिसका अर्थ है संप्रेषण/ संस्कृत भाषा में अर्थ उत्तराधिकार।

भारतीय परंपरा में परिवर्तन के तीन सिद्धांत मान्य है --

1-श्रुति

2-स्मृति

3-अनुभव ।

अनुभव या व्यैक्तिक अनुभव क्रांतिकारी सिद्धांत है।

डी.पी. मुखर्जी परंपराओं की पूजा नहीं की। उनका पूर्ण व्यक्ति अथवा संतुलित व्यक्ति से तात्पर्य था जिसमें

- नैतिक जोश व सुरुचिपूर्ण गुण तथा बौद्धिकता का मिश्रण हो।

इतिहास व तार्किकता का बोध हो।

डी. पी. मुखर्जी का प्रमुख योगदान परंपराओं की भूमिकाओं का सैद्धांतिक रूपांतरण है। इससे सामाजिक परिवर्तन का विश्लेषण किया जा सकेगा ।

डी. पी. मुखर्जी का मत है कि भारतीय सामाजिक वास्तविकता का सही मूल्यांकन उसकी विशेष परंपरा विशिष्ट तरीकों व संस्कृति के विभिन्न प्रतिमाओं व सामाजिक क्रियाओं से ही होता है।

डी.पी. मुखर्जी ने भारतीय इतिहास का द्वंदात्मक प्रक्रिया द्वारा विश्लेषण किया है । उनके अनुसार परंपरा तथा आधुनिकता उपनिवेशवाद तथा राष्ट्रवाद व्यक्तिवाद और समूहवाद में द्वंदात्मक संबंध है। ये एक दूसरे को प्रभावित करते तथा होते हैं ।

डी. पी. मुखर्जी का द्वन्द्ववाद का आधार मानवतावाद रहा है , जो संकुचित नृजातीय एवं राष्ट्रीय विचारों की सीमाओं से अलग था ।

डी. पी. मुखर्जी ने भारतीय समाज के अध्ययन के लिए परंपराओं के अध्ययन को आवश्यक बताया है।

डी. पी. मुखर्जी ने सामाजिक विज्ञान में संक्षिप्तीकरण और विभागीकरण की प्रवृत्ति को अस्वीकार किया है।

डी. पी. मुखर्जी भारतीय समाज की प्रक्रियाओं के विश्लेषण में हीगल (विचारों का द्वन्द्व) और मार्क्स (भौतिक पदार्थों का द्वन्द्व)दोनों के द्वन्द्ववादी धारणा से भिन्न द्वंदात्मकता का प्रयोग परंपराओं के द्वन्द्व के रूप में किया है ।

सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में उन्होंने अनेक ब्राह्मण ग्रंथ के चवैंती चवैंती अर्थात आगे बढ़ो आगे बढ़ो की धारणा को स्वीकार किया है।

डी. पी. मुखर्जी ने प्रगति के विकासवादी सिद्धांत को अस्वीकार किया है और कहा है कि यह कोई प्राकृतिक घटना नहीं है, अपितु मानव के जीवन के उद्देश्य पर आधारित एक विचार है।

डी. पी. मुखर्जी समन्वय वादी विचारधारा के कारण उन्होंने वेदांत पश्चिमी उदारवाद और मार्क्सवाद के संबंध में बल दिया है।

डी .पी . मुखर्जी ने आधुनिकता और परंपरा के अपने विश्लेषण में आधुनिकता के साथ तार्किकता/ युक्तमूलकता (रेशनलटी) के तत्व को नहीं जोड़ा है।

डी .पी. मुखर्जी के अनुसार परंपरा आधुनिकता को नकारती नहीं है। अतः यह दोनों एक दूसरे के सहयोग से पल्लवित होती है।

डी. पी. मुखर्जी ने मूल्यों के संतुलन की समस्या के साथ-साथ परंपरा और आधुनिकता के समन्वय पर जोर दिया है ।

डी . पी . मुखर्जी अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक अध्ययन संस्थान में समाजशास्त्र के अतिथि आचार्य (विजिटिंग प्रोफेसर) के रूप में कार्य किया है। उन्होंने अंतरराष्ट्रीय समाजशास्त्रीय परिषद में भारत की ओर से प्रतिनिधित्व किया और इसके उपाध्यक्ष भी रहे हैं।

सन 1955 में उन्होंने भारतीय समाजशास्त्र परिषद के प्रथम अधिवेशन की अध्यक्षता की तथा एक अत्यंत विचारोत्तेजक तथा मार्गदर्शक भाषण दिया ।

डी . पी. मुखर्जी ने पश्चिमी अनुभव होता वाद के विचार को अस्वीकार कर भारत के समाजशास्त्र के लिए व्याख्यात्मक पद्धति का समर्थन किया।

प्रमुख कृतियां :-

1-पर्सनैलिटी एंड द सोशल साइंसेज, 1924 ।

2- बेसिक कॉन्सेप्ट इन सोशियोलॉजी, 1932 ।

3- मॉडर्न इंडियन कल्चर ,1942 ।

4 - टैगोर - ए स्टडी ,1943 ।

5 - आन इंडियन हिस्ट्री, 1945 ।

6 - इंट्रोडक्शन टू इंडियन म्यूजिक ,1945 ।

7 - प्रॉब्लम्स आफ इंडियन यूथ, 1946।

8- व्यूज एंड काउन्टरव्यूज, 1946।

9- डायवर्सिटी, 1958।

डी.पी. मुखर्जी का जन्म 1894 बंगाल के एक मध्यवर्गीय ब्राह्मण परिवार में हुआ था । उनकी प्रारंभिक शिक्षा बंगाल में ही हुई। आरंभ में उनकी रुचि साहित्यकार बनने की थी, किंतु अर्थशास्त्र विषय में एम.ए.करने के बाद उन्होंने अनेक विषयों पर समालोचनात्मक लेख लिखे। सन 1922 में डी.पी. मुखर्जी लखनऊ विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र एवं समाजशास्त्र विभाग में प्रवक्ता की पद पर नियुक्त हुए। वह अपने आप को स्वयं मार्क्सवादी मानते थे, उन्होंने मार्क्स के अनेक सिद्धांतों को भारतीय परंपराओं के साथ जोड़कर उनका विश्लेषण किया। अनेक समाजशास्त्रियों का मानना है कि भारत में संस्कृति का समाजशास्त्र (सोशियोलॉजी आफ कल्चर) स्थापित करने का श्रेय डी.पी. मुखर्जी को ही है।उन्होंने भारतीय संस्कृति से संबंधित अनेक समस्याओं की आलोचनात्मक विवेचना करके एक नई विचारधारा को जन्म दिया। किसी भी विषय पर लिखते समय वह आलोचनात्मक शैली का अधिक प्रयोग करते थे। उनकी दृष्टि में कला, संगीत और नाटक भी संस्कृति के अंग थे । इसलिए उन्होंने इन क्षेत्रों में भी अनेक आलोचनात्मक लेख लिखे । अपने शैक्षिक जीवन में उन्होंने अपने आप को किसी एक विषय तक ही सीमित नहीं रखा था। अर्थशास्त्र में प्रशिक्षित होने के बाद यह मानने लगे कि सामाजिक विज्ञानों में समाजशास्त्र का क्षेत्र सबसे अधिक व्यापक है इसी कारण उन्होंने सन् 1932 में "समाजशास्त्र में मूल अवधारणाएं" (बेसिक कॉन्सेप्ट इन सोशियोलॉजी) नाम से पुस्तक लिखी हुई जो किसी भारतीय समाजशास्त्री द्वारा मौलिक अवधारणाओं पर लिखी गई सम्भवतः पहली पुस्तक थी।

राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर डी.पी. मुखर्जी ने समाजशास्त्र के विकास में विशेष योगदान दिया उन्होंने हेग के "इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज" में समाजशास्त्र का विजिटिंग प्रोफेसर बनाकर भेजा गया, जहां उन्होंने समाजशास्त्र को एक दिशा देने से संबंधित महत्वपूर्ण व्याख्यान दिए। भारतीय समाजशास्त्री संगठन (इंडियन सोशियोलॉजिकल एसोसिएशन) की स्थापना में भी उन्होंने विशेष रुचि ली। वह न केवल संगठन के संस्थापक सदस्यों में से एक थे बल्कि इसकी प्रबंध समिति और संपादक मंडल में भी सक्रिय सदस्य रहे। इंडियन सोशियोलॉजिकल एसोसिएशन की प्रतिनिधि के रूप में उन्होंने "अंतर्राष्ट्रीय समाजशास्त्री संगठन" के

अधिवेशन में भाग लिया तथा उसके उपाध्यक्ष निर्वाचित किए गए। सन 1962 में इनका देहांत हो गया। अपने जीवन काल में डी.पी. मुखर्जी ने समाजशास्त्र इतिहास साहित्य तथा संगीत पर अनेक पुस्तकें लिखी।
समाजशास्त्रीय आधार पर उनकी अनेक रचनाएं निम्नलिखित हैं:-

1- पर्सनालिटी एंड द सोशल साइंसेज, 1924
2- बेसिक कॉन्सेप्ट इन सोशियोलॉजी, 1932
3- मॉडर्न इंडिया कल्चर, 1942
4- सोशियोलॉजी आॅफ इंडियन कल्चर, 1942
5- प्रॉब्लम्स आॅफ इंडियन यूथ, 1946
6- व्यूज एंड काउंटरव्यूज, 1946
7- डाइवर्सिटीज, 1958

इन पुस्तकों में "मॉडर्न इंडिया कल्चर" तथा "डाइवर्सिटीज" उनकी सबसे प्रमुख समाजशास्त्रीय रचनाएं मानी जाती हैं ।

संस्कृत विविधताएं (कल्चरल डायवर्सिटी)

डी.पी. मुखर्जी ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "डाइवर्सिटीज" में भारत की सांस्कृतिक विविधता को विस्तार से स्पष्ट किया। उन्होंने सांस्कृतिक विविधता को भारतीय समाज की एक ऐसी विशेषता के रूप में स्पष्ट किया जो बहुत लंबे समय से भारतीय जनजीवन को प्रभावित करती रही है। उन्होंने जिन प्रमुख विषयों पर विचार किया उनमें (1)संस्कृति की अवधारणा, (2) ऐतिहासिक आधार पर भारतीय संस्कृति में मिश्रण और समन्वय, तथा (3)परंपरा एवं आधुनिकीकरण आदि मुख्य हैं। डी.पी. मुखर्जी के अनुसार समाजशास्त्रीय अध्ययन का प्रमुख केंद्र संस्कृति है। संस्कृति से उनका अभिप्राय केवल विशेष परंपराओं अथवा धार्मिक व्यवस्थाओं से नहीं था। उन्होंने भारतीय संस्कृति को एक ऐसी समग्रता के रूप में स्पष्ट किया, जिसमें एक लंबे समय से समन्वय और संशोधन की प्रक्रिया चलती रही है, अर्थात उन्होंने भारतीय समाज को सांस्कृतिक समन्वय और आत्मसात की प्रक्रिया के रूप में स्पष्ट किया। उनका उद्देश्य भारतीय संस्कृति की विविधता में एकता को स्पष्ट करना था। इसी को आधार मानते हुए उन्होंने कहा कि भारतीय संस्कृति एक ऐसी संस्कृति है जिसका विकास बहुत से प्रजाति समूहों और संस्कृतियों द्वारा दी गई चुनौतियां का समाधान खोजने के प्रत्युत्तर में हुआ। विभिन्न युगों में इसी के फलस्वरुप भारतीय संस्कृति में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन होते रहे हैं तथा प्रत्येक युग में संस्कृति का एक नया संश्लेषित रूप स्थापित होता गया। इसी के फलस्वरूप भारत की संस्कृति में एक अपूर्व विविधता पैदा हुई। यद्यपि अपनी समन्वयवादी प्रकृति के कारण यहां सांस्कृतिक एकता निरंतर बनी रही। डी.पी. मुखर्जी का उद्देश्य संस्कृति के अंतर्गत मुख्य रूप से हिंदू मुस्लिम संबंधों का विश्लेषण करना और ब्रिटिश शासन के दौरान भारतीय संस्कृति में पैदा होने वाली परिवर्तन की नई प्रक्रियाओं को स्पष्ट करना था। उन्होंने संस्कृति और साहित्य के घनिष्ठ संबंध को स्पष्ट करने में भी समाजशास्त्र में भारत की सांस्कृतिक विविधताओं का अध्ययन करने पर बोल दिया।

हिंदू-मुस्लिम संबंध

डी.पी. मुखर्जी ने विभिन्न समूह के बीच होने वाली अंतर्क्रियाओं को सांस्कृतिक विकास का प्रमुख आधार माना। उनके अनुसार इन अंतर्क्रियाओं पर एक विशेष समय की राजनीतिक व्यवस्था, आर्थिक संबंधों, तथा परिवर्तन की प्रक्रियाओं का विशेष प्रभाव होता है। यदि हम भारत में मुस्लिम शासन काल की ओर ध्यान दें, तो विदित होता है कि इस समय भारत की परंपरागत संस्कृति के ढांचे में व्यापक परिवर्तन होना आरंभ हो गए थे उत्तर भारत में 11वीं शताब्दी से 17वीं शताब्दी के मध्य हिंदू बहुल प्रजा पर मुसलमान बादशाहों ने शासन किया। इस बीच विभिन्न हिंदू राजाओं और मुस्लिम शासको के बीच अनेक संधियां होती रही। यह एक दूसरे से भिन्न संस्कृतियों वाले शासको के बीच होने वाली साझेदारी तथा भाईचारे की दशा का स्पष्ट उदाहरण है। भारत में जब एक बड़े मुगल साम्राज्य की स्थापना हुई तो राजनीतिक अस्थिरता कम हो जाने के कारण यहां एक ऐसी संस्कृति विकसित होने लगी जो पहले की तुलना में अधिक समन्वित और संश्लिष्ट थी। सांस्कृतिक आधार पर साहित्य वेशभूषा तथा कला के क्षेत्र में हिंदू मुस्लिम संस्कृतियों ने एक दूसरे को प्रभावित किया। उत्तर भारत में मुसलमान का सूफी मत

और हिंदुओं का भक्ति संप्रदाय एक दूसरे से निरंतर प्रभावित रहे। हिंदू विश्वासों के अनुसार व्यक्ति की स्थिति का जन्म पर आधारित सामाजिक संस्तरण के अधीन माना गया, जबकि मुस्लिम संस्कृति सामाजिक समानता में विश्वास करती रही। इन भिन्नताओं के बावजूद भी हिन्दू-मुस्लिम संबंधों ने परिवर्तन और समन्वय पर आधारित एक नई संस्कृति का जन्म दिया।

पश्चिम का प्रभाव (इंपैक्ट ऑफ द वेस्ट)

डी.पी. मुखर्जी ने कहा कि संस्कृति कोई स्थिर विशेषता नहीं है समय की आवश्यकता के अनुसार इसमें परिवर्तन होते रहते हैं तथा इन्हीं परिवर्तनों से एक नए समाज का निर्माण होता है। परंपरागत रूप से भारत में आश्रम व्यवस्था, पुरुषार्थ अथवा मोक्ष की अवधारणा को साधारणता भारतीय संस्कृति के आधार के रूप में देखा जाता है, लेकिन वास्तव में यह समाज के केवल आदर्श प्रारूप थे। जिनका उत्पादन प्रणाली से कोई संबंध नहीं था। इस्लाम ने भी भारतीय समाज को प्रभावित अवश्य किया लेकिन इसके फलस्वरूप या तो हिंदू-मुस्लिम संस्कृति के बीच मिश्रण बढ़ा अथवा देशी और विदेशी की भावना के आधार पर देश के अनेक हिस्सों में मुस्लिम विरोधी विद्रोह पैदा हुए। भारत में जब ब्रिटिश शासन आरंभ हुआ तो इसके फलस्वरूप भारतीय संस्कृति और समाज का रूप तेजी से बदलने लगा। पश्चिम की संस्कृति एक भिन्न उत्पादन प्रणाली वैचारिकता तथा जीवन पद्धति पर आधारित थी। भारत में अंग्रेजी शासन प्रारंभ आरंभ होने पर पुरानी भूमि व्यवस्था को समाप्त कर इसकी जगह एक नई भूमि व्यवस्था लागू की गई। आवागमन की सुविधाएं बढ़ाने से ग्रामीण अर्थव्यवस्था नगरीय अर्थव्यवस्था से जुड़ने लगी और एक नई शिक्षा व्यवस्था की स्थापना होने से लोगों को अपने इतिहास राजनीति और भौगोलिक दशाओं को जानने का अवसर मिला। पश्चिमी दर्शन के प्रभाव से भारतीयों के दृष्टिकोण में परिवर्तन होने के साथ ही धीरे-धीरे अपने अधिकारों के प्रति चेतना बढ़ने लगी । इस समय उन विचारों को अधिक महत्व मिलने लगा जो अंधविश्वासों पर आधारित न होकर तर्क पर आधारित थे। पश्चिम के प्रभाव से भारतीय संस्कृति में होने वाला परिवर्तन कभी निर्बाध नहीं रहा। यहां के अधिकांश बुद्धिजीवियों और राजनीतिज्ञों ने समय-समय पर पश्चिमी संस्कृति के मशीनीकरण का इसलिए व्यापक विरोध किया कि मशीनों के द्वारा उत्पादन होने से यहां ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विघटन हो सकता है । डी.पी. मुखर्जी ने कहा कि मानव जाति उन्हें दशाओं को एक समस्या के रूप में देखते हैं जिनका समाधान खोज पाना उनके लिए संभव होता है। मार्क्स के इस कथन के आधार पर डी.पी. मुखर्जी यह स्पष्ट करना चाहते थे कि पश्चिम के प्रभाव से भारत में विभिन्न वर्गों के उत्पादन संबंधों में परिवर्तन अवश्य आया है लेकिन मशीनीकरण के विरोध के कारण ही यहां एक विकेंद्रित और सहकारिता पर आधारित अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन दिया जाने लगा। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान एक नए समाज के निर्माण से संबंधित जो कार्यक्रम बनाए गए वह भी किसी न किसी रूप में पश्चिमी संस्कृति के दर्शन से प्रभावित थे इस प्रकार संस्कृति को एक नया रूप देने में पश्चिम के विचारों का निश्चय ही एक अधिक विशेष योगदान रहा।

संस्कृति तथा आर्थिक विकास (कल्चर एंड इकोनामिक डेवलपमेंट)

अर्थशास्त्र में प्रशिक्षित होने के बाद भी अर्थव्यवस्था तथा आर्थिक विकास के प्रति डी.पी. मुखर्जी का दृष्टिकोण अन्य अर्थशास्त्रियों से भिन्न था। उन्होंने भारत के आर्थिक विकास को यहां की सांस्कृतिक विशेषताओं के संदर्भ में स्पष्ट करते हुए कहा कि किसी समाज की अर्थव्यवस्था और आर्थिक विकास को उसके सामाजिक मूल्य तथा सामाजिक संगठन की प्रकृति से अलग करके नहीं समझा जा सकता है। यदि हम भारत की प्राचीन संस्कृति के संदर्भ में देखें तो स्पष्ट होता है कि प्राचीन काल में भूमि पर किसान का ही स्वामित्व होता था। यद्यपि राज्य द्वारा दिए जाने वाले संरक्षण के बदले किसान को अपनी उपज का एक भाग राजकोष में देना होता था । जब यहां बौद्ध धर्म को मानने वाले राजाओं का प्रभाव बढ़ा तब कृषि भूमि बौद्ध संघ के नियंत्रण में रहती थी। गांव की संरचना भी नातेदारी समूहों अथवा कुछ विशेष जाति-समूहों के द्वारा होती थी। ऐसे समूह आपस में काफी संगठित होकर कृषि कार्य करते थे।

ब्रिटिश शासन काल के दौरान भारत की अर्थव्यवस्था में जो व्यापक परिवर्तन हुए वे भी नई संस्कृति के प्रभाव को स्पष्ट करते हैं। पश्चिम की संस्कृति ग्राम-प्रधान न होकर एक नगरीय संस्कृति है। भारत में

जैसे-जैसे पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव बढ़ा ,यहां की प्राचीन सांस्कृतिक संस्थाएं कमजोर पड़ने लगी। पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव से नगरों में स्थित मध्यम वर्ग का महत्व बढ़ने लगा। यह वर्ग पश्चिमी विचारों और रहन-सहन के पश्चिमी ढंग से अधिक प्रभावित था। डॉ मुखर्जी ने यह स्पष्ट किया की सांस्कृतिक विशेषताओं में होने वाले परिवर्तनों के अनुसार ही भारत की अर्थव्यवस्था तथा आर्थिक विकास की प्रकृति में परिवर्तन होते रहे हैं।

संस्कृति एवं साहित्य (कल्चर एंड लिटरेचर)

भारतीय संस्कृति के बारे में अपने विचार स्पष्ट करते हुए डी.पी. मुखर्जी ने संस्कृति तथा साहित्य के संबंध को समझने की आवश्यकता पर बल दिया और कहा कि साहित्य की परंपराएं सांस्कृतिक परंपराओं से ही संबंधित होती हैं तथा जन सामान्य के विचारों को प्रभावित करने में यह संचार के एक साधन के रूप में कार्य करती हैं। एक विशेष अवधि में लिखा जाने वाला साहित्य उसे समय की सांस्कृतिक विशेषताओं तथा सांस्कृतिक प्रक्रियाओं से ही प्रभावित होता है। यदि साहित्य का विवेचन समाजशास्त्री सिद्धांतों के संदर्भ में किया जाए तो उसे सामाजिक विकास को एक नई दिशा मिल सकती है।

मुखर्जी का मत है कि प्राचीन काल में संस्कृत भाषा के माध्यम से यहां एक ऐसे साहित्य का विकास हुआ जो उस समय की संस्कृति का सही निरूपण करता था। यहां की सामाजिक एकता, संस्थाओं, सामाजिक मूल्यों तथा जीवन प्रतिमानों को इसके आधार पर समझना सरल था। इसके बाद मुस्लिम शासनकाल में जब हिंदू और मुस्लिम संस्कृतियों के बीच आदान-प्रदान शुरू हुआ तब संस्कृति का एक नया रूप हमारे सामने आया। इससे यहां के साहित्य में भी परिवर्तन स्पष्ट होने लगा।। जैसे- कबीर ,गुरुनानक तथा अनेक सूफी संतों ने जिस साहित्य का सृजन किया उसमें हिंदू और मुस्लिम संस्कृति का एक मिला-जुला रूप देखने को मिलता है। मुस्लिम शासन के बाद भारत में जब ब्रिटिश राज्य की स्थापना हुई तब यहां एक ऐसी संस्कृति को प्रोत्साहन मिलने लगा जो नए सामाजिक मूल्य वैयक्तिक स्वतंत्रता, राष्ट्रवाद, बुध्दिवाद, मानवतावाद तथा समानता के सिद्धांतों पर आधारित थी। ब्रिटिश काल के साहित्य ने सोई हुई भारतीय जनता में एक नई चेतना पैदा की। इस समय की संस्कृति में मानवतावादी मूल्य की प्रधानता होने से ही जाति के बंधन दुर्बल पड़ने लगे तथा सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए वैज्ञानिक और सुधारवादी दृष्टिकोण विकसित हुआ। इसी कारण उन्होंने भारतीय पश्चिम में उन्होंने भारत में पश्चिमी संस्कृति के बढ़ते हुए प्रभाव को एक समस्या के रूप में न देखकर उसे संस्कृतियों के संबंध में एक नई कड़ी के रूप में देखा। उनका विचार रहा कि समाजशास्त्र में सांस्कृतिक विविधता के विभिन्न पक्षों तथा इससे संबंधित क्रमिक प्रक्रियाओं के अध्ययन द्वारा हम अपने समाज को अधिक व्यवस्थित रूप में समझ सकते हैं।

परंपरा तथा आधुनिकीकरण (ट्रेडीशन एंड मॉर्डनाइजेशन)

प्रोफेसर डी.पी. मुखर्जी ने अपनी पुस्तक "डाइवर्सिटीज" में आधुनिकीकरण की अवधारणा को अपने से पहले के अनेक लेखकों द्वारा दिए के विचारों से बिल्कुल भिन्न रूप से प्रस्तुत किया। डेनियल लर्नर ने आधुनिकीकरण को एक ऐसी दशा के रूप में स्पष्ट किया जिसमें पांच मुख्य विशेषताओं का समावेश हो। यह विशेषताएं हैं-(1) समानता , स्वतंत्रता तथा लोकतांत्रिक मूल्यों पर आधारित नगरीयता में वृद्धि, (2) संचार के साधनों में वृद्धि और शिक्षा का प्रसार (3) आर्थिक तथा राजनीतिक सहभागिता में वृद्धि, (4) सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि, (5) धर्मनिरपेक्षता और तर्कपूर्ण विचारों में वृद्धि। इसके अतिरिक्त शिल्स ने प्रौद्योगिकी के विकास वैयक्तिक आकांक्षाओं को राज्य द्वारा मान्यता तथा परिवर्तन को भी आधुनिकीकरण के लक्षणों के रूप में स्पष्ट किया है।

आधुनिकीकरण की अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए डी.पी. मुखर्जी ने एक और परंपरा के अर्थ पर प्रकाश डाला और दूसरी ओर ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर परंपराओं में होने वाले परिवर्तन के संदर्भ में आधुनिकीकरण की प्रकृति को स्पष्ट किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने इस तथ्य का भी विवेचन किया कि भारतीय समाज के विकास के लिए आधुनिकीकरण का पश्चिमी मॉडल उपयुक्त नहीं है, बल्कि भारतीय परंपरा के समूह वादी मूल्यों पर आधारित आधुनिकीकरण ही हमारे समाज के लिए अधिक उपयोगी है।

आधुनिकीकरण (मार्डनाइजेशन)

डी.पी. मुखर्जी ने आधुनिकीकरण को एक ऐसी दशा के रूप में स्पष्ट किया है जो परंपरा से पूर्णतया भिन्न है। अक्सर इस परंपरा की विरोधी दशा समझ लिया जाता है। वास्तविकता यह है कि जिस तरह परंपरा का इतिहास होता है इसी तरह आधुनिकीकरण भी प्रत्येक युग में विद्यमान रहने वाली एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है। परंपरा और आधुनिकता इस अर्थ में परस्पर संबंध हैं कि आधुनिकीकरण को हम किसी समाज की परंपरा में होने वाले परिवर्तन के संदर्भ में ही समझ सकते हैं। जिस दशा को हम आधुनिकीकरण कहते हैं वह नवीन दशाओं के फलस्वरुप परंपरा के साथ सामंजस्य से और अनुकूलन की दशा को ही स्पष्ट करती है। इसका तात्पर्य है कि एक विशेष परंपरा से संबंधित संस्कृति प्रतिमानों में जो संशोधन अथवा विस्तार होता है उसी का नाम आधुनिकीकरण है। दूसरा तथ्य यह है कि आधुनिकीकरण से परंपरा के अस्तित्व में कोई बाधा नहीं पड़ती है, बल्कि अक्सर आधुनिकीकरण से परंपरा को एक उपयोगी रूप मिल जाता है। इस दशा को डी.पी. मुखर्जी ने हीगल और मार्क्स द्वारा प्रतिपादित प्रतिरोध और समन्वय की अवधारणा द्वारा स्पष्ट किया है जिस तरह विचारों और भौतिक दशाओं के क्षेत्र में वाद और प्रतिवाद होने से एक नया समन्वय संवाद सामने आता है। इस तरह परंपरा आधुनिकता के बीच द्वन्द होने से विचारों और व्यवहारों का जो नया समन्वय विकसित होता है उसी को हम आधुनिकीकरण कहते हैं। डी.पी. मुखर्जी के अनुसार आधुनिकीकरण का तात्पर्य कभी यह नहीं होता है कि समाज अपनी परंपराओं से पूरी तरह पृथक हो गया है। व्यावहारिक रूप से समाज की परंपराएं केवल नई दिशाओं के साथ सामंजस्य स्थापित करती हैं। इस दृष्टिकोण से भी आधुनिकीकरण का अध्ययन केवल एक सापेक्ष प्रक्रिया के रूप में किया जाना चाहिए।

आधुनिकीकरण तथा व्यक्तित्व (मार्डनाइजेशन एण्ड पर्सनालिटी)

समाजशास्त्री अध्ययन के लिए आधुनिकीकरण की प्रकृति का विश्लेषण इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है किसी एक संतुलित व्यक्तित्व का निर्माण आधुनिकीकरण से ही संभव है। डी.पी. मुखर्जी ने पश्चिम की परंपरा व्यक्तिवादी और तर्कनावादी मूल्यों को अधिक महत्व देती है। इसी कारण वहां जन-साधारण के जीवन में सुधार लाने के लिए नई प्रौद्योगिकी के विकास को अधिक से अधिक उपयोग करना समझ गया है। मुखर्जी के अनुसार पश्चिमी देशों में आधुनिकीकरण का जो रूप विकसित हुआ है वह एक ऐसे मानवतावाद पर बल देता है जो उग्र राष्ट्रीय विचारों और प्रजातीय भेद-भावों के अधीन है। भारत के आधुनिकीकरण के लिए औद्योगिक विकास का पश्चिमी मॉडल उपयुक्त नहीं है क्योंकि वहां मानवीय मूल्यों की अपेक्षा होने लगी है। पश्चिम के प्रभाव से भारत के मध्यम वर्ग में जिस परंपरा का अनुकरण किया जाने लगा है उससे वह अपनी मौलिक विशेषताओं से अलग हटता गया। डी.पी.मुखर्जी को एक ऐसा विचारक माना जा सकता है जिन्होंने भारतीय समाजशास्त्रियों द्वारा पश्चिमी समाज के मॉडल को बिना किसी संशोधन के स्वीकार कर लेने का सदैव विरोध किया। अपनी पुस्तक "डाइवर्सिटीज" में उन्होंने लिखा कि ऐसा लगता है कि हमारे पास अपना प्रस्तुत करने के लिए कोई ठोस आधार और योजना नहीं है जिन्हें पश्चिम के विचारक हमसे ग्रहण कर सकें। उनके अनुसार भारतीय संस्कृति और परंपरा इतनी सशक्त है कि यदि हम इसके आधार पर सामाजिक सांस्कृतिक और प्राविधिक स्तर पर आधुनिकीकरण को एक स्वदेशी रूप दें तो प्रत्यक्षवादी समाजशास्त्रियों के लिए हम एक नया मॉडल दे सकते हैं। मुखर्जी के चिंतन का यह वह पक्ष है जो उन्हें एक राष्ट्रवादी विचारक के रूप में स्थापित करता है।

आधुनिकीकरण एवं प्रौद्योगिक संस्कृति (मार्डनाइजेशन एण्ड टेक्नोलॉजी कल्चर)

प्रोफेसर मुखर्जी ने "डायवर्सिटीज" में आधुनिकीकरण के एक विशेष पक्ष के रूप में प्रौद्योगिकी के विकास एवं आधुनिकीकरण के संबंध पर भी प्रकाश डाला। उनके अनुसार प्रौद्योगिकी के अनियोजित विस्तार से मानवीय संबंधों के प्रतिमान इतने अस्त-व्यस्त हो सकते हैं कि व्यक्ति को विभिन्न आर्थिक क्रियाओं में अपने गुणों को दिखाने का जो आनंद मिलता है वह समाप्त हो सकता है। उन्होंने आधुनिकीकरण के लिए पश्चिमी वैचारिकी की जगह भारतीय वैचारिकी पर अधिक बल दिया तथा एक

समन्वयात्मक दृष्टिकोण के आधार पर आधुनिकीकरण की विवेचना की। उनका स्पष्ट मत था कि वर्तमान संदर्भ में भारतीय समाज का आधुनिकीकरण भारत की परंपराओं और वर्तमान की आवश्यकताओं के समन्वय के द्वारा ही संभव है।